स्क्रीन के उस पार

जब डिजिटल कंटेंट व्यवहारिक संप्रभुता के लिए खतरा बन जाता है

डिजिटल कंटेंट अब केवल सूचना या मनोरंजन का माध्यम नहीं रहा। यह एक ऐसी व्यवहारिक शक्ति बन चुका है जो मानव की सोच, निर्णय, संबंधों, सामाजिक विश्वास और राष्ट्रीय सुरक्षा तक को प्रभावित कर सकता है। इस लेख का केंद्रीय तर्क यह है कि नागरिक क्या सोचें, यह प्रश्न नहीं है; प्रश्न यह है कि नागरिक कैसे सोचें, इसकी स्वतंत्र क्षमता सुरक्षित रहे या नहीं। यही अंतर लोकतांत्रिक मूल्यों, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और विवेकपूर्ण सार्वजनिक विमर्श की रक्षा का आधार है। और यही अंतर व्यवहारिक संप्रभुता (Behavioural Sovereignty) तथा संज्ञानात्मक सुरक्षा (Cognitive Security) को राष्ट्रीय संप्रभुता और राष्ट्रीय प्रत्यास्थता के अनिवार्य स्तंभ बनाता है। इसलिए कंटेंट गवर्नेंस को सेंसरशिप के बजाय एक समग्र, बहु-स्तरीय और राष्ट्रीय प्रत्यास्थता आधारित संस्थागत ढाँचे के रूप में विकसित किया जाना चाहिए।

डॉ. पद्मलोचन दाश

कुछ बदल चुका है, और यह परिवर्तन न तो गोलियों की आवाज़ के साथ आया है, न ही किसी आक्रामक सेना की पदचाप के साथ। डिजिटल पारिस्थितिकी तंत्र (Digital Resilience Ecosystem) के अभूतपूर्व विस्तार ने कंटेंट को संचार के माध्यम से कहीं अधिक, एक सामरिक व्यवहारिक शक्ति में परिवर्तित कर दिया है। पारंपरिक सूचना के विपरीत, डिजिटल कंटेंट निरंतर निर्मित होता है, एल्गोरिद्म के माध्यम से संरचित किया जाता है, प्रत्येक व्यक्ति के अनुरूप वैयक्तिकृत किया जाता है और परस्पर जुड़े डिजिटल मंचों के माध्यम से असाधारण गति से पुनः वितरित होता रहता है। इसका प्रभाव तात्कालिक नहीं, बल्कि संचयी है; धीरे-धीरे आता है, किन्तु अत्यंत गहरा होता है।

वर्तमान डिजिटल कंटेंट पारिस्थितिकी तंत्र अलग-अलग मंचों का मात्र संग्रह नहीं है। यह एक जटिल नेटवर्क है जिसमें कंटेंट निर्माता, इन्फ्लुएंसर, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित प्रणालियाँ, स्वचालित बॉट, अनुशंसा एल्गोरिद्म, प्लेटफ़ॉर्म स्वामी, राजनीतिक अभिनेता, विदेशी प्रभाव संचालक, आपराधिक नेटवर्क, उपभोक्ता, नियामक संस्थाएँ और परिवार सब सम्मिलित हैं। इनमें से प्रत्येक हितधारक डिजिटल कंटेंट की गुणवत्ता, पहुँच, विश्वसनीयता और सामाजिक प्रभाव को आकार देता है। शासन व्यवस्था यदि केवल किसी एक मंच को लक्ष्य बनाती है और पूरे पारिस्थितिकी तंत्र की उपेक्षा करती है, तो वह समस्या की जड़ के स्थान पर उसके एक छोटे से हिस्से को देख रही होती है।

एक ऐसा नशा जो मस्तिष्क की संरचना बदल देता है

एक चौदह वर्षीय किशोर रात के दो बजे तक रील स्क्रॉल करता है। सुबह उठने पर आँखें लाल हैं, ध्यान बिखरा हुआ है, कक्षा में शिक्षक का एक वाक्य पूरा सुनने का धैर्य नहीं बचा। माता-पिता शिकायत करते हैं कि बच्चा "बदल गया है।" बदला नहीं है; बदला जा रहा है। हर रात, एक-एक स्क्रॉल के साथ।

डिजिटल कंटेंट का प्रभाव केवल उसे देखने या पढ़ने तक सीमित नहीं रहता। यह एक क्रमिक प्रभाव श्रृंखला (Progressive Impact Chain) को जन्म देता है, जो ध्यान आकर्षित करने से आरंभ होती है, भावनात्मक प्रतिक्रियाओं को उत्तेजित करती है, धारणाओं को प्रभावित करती है, विश्वासों को सुदृढ़ करती है, दृष्टिकोणों को आकार देती है, निर्णयों को निर्देशित करती है और अंततः व्यवहार को स्थायी आदतों में परिवर्तित कर देती है। समय के साथ यही प्रतिरूप व्यक्ति की पहचान, जीवनशैली और सामाजिक संबद्धताओं का निर्माण करते हैं। जब यही परिवर्तन करोड़ों व्यक्तियों में समानांतर रूप से घटित होता है, तब उसके संचयी प्रभाव सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और राष्ट्रीय सुरक्षा के स्तर पर दूरगामी परिणाम उत्पन्न करते हैं।

डिजिटल कंटेंट का अत्यधिक उपभोग नशीले पदार्थों की तरह प्रभाव उत्पन्न करने लगा है। यह अतिशयोक्तिपूर्ण उपमा नहीं, संरचनात्मक वास्तविकता है। भावनात्मक रूप से उद्दीपक, भ्रामक अथवा मनोवैज्ञानिक रूप से अभिकल्पित कंटेंट के लगातार संपर्क में रहने से ध्यान, स्मृति, तर्कशक्ति, भावनात्मक संतुलन, आवेग नियंत्रण, सहानुभूति, विवेक, समालोचनात्मक चिंतन तथा वास्तविकता का परीक्षण करने की क्षमता क्षीण होने लगती है।

ध्यान की अवधि लगातार घटती जाती है। विश्लेषणात्मक सोच कमजोर होने लगती है। आवेगशीलता बढ़ती है। संज्ञानात्मक पूर्वाग्रह स्वयं को सुदृढ़ करते जाते हैं। सहानुभूति क्षीण होती है, विश्वास विकृत होने लगता है और प्रत्येक स्क्रॉल के साथ तथ्य और मनोवैज्ञानिक हेरफेर के बीच अंतर करने की क्षमता घटती जाती है। मानव मस्तिष्क की कार्यकारी क्षमताएँ केवल कमजोर नहीं पड़तीं, उनमें मिलावट होने लगती है।

हर संबंध पर प्रहार

डिजिटल कंटेंट से होने वाली क्षति व्यक्ति के मस्तिष्क तक सीमित नहीं रहती। यह मानवीय संबंधों, विश्वास, सहानुभूति, संवाद और साझा मूल्यों को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रभावित करती रहती है।

परिवार को लें। एक छोटे शहर का परिवार, जहाँ दादी WhatsApp पर आए एक भ्रामक वीडियो के आधार पर बहू के धर्म पर संदेह करने लगती है। माता-पिता और किशोर बच्चों के बीच संवाद समाप्त हो जाता है क्योंकि दोनों अलग-अलग स्क्रीन पर, अलग-अलग वास्तविकताओं में जी रहे हैं। पारिवारिक अधिकार, भावनात्मक जुड़ाव, देखभाल की संस्कृति, अपेक्षाएँ, साझा अनुभव; सब कुछ संचार के बदले स्वरूप से पुनः परिभाषित हो रहा है। ऐसे उदाहरण आज ढूँढना कठिन नहीं रह गया है।

शिक्षा में यह शिक्षक-छात्र संबंध, शोध-निर्देशक और शोधार्थी, गुरु और शिष्य के बीच की गतिशीलता को पुनः आकार दे रहा है। सीखने की प्रवृत्तियाँ, ज्ञान के प्रति सम्मान, शैक्षणिक ईमानदारी, अनुशासन; ये सब डिजिटल कंटेंट के निरंतर प्रभाव में हैं। स्वास्थ्य क्षेत्र में चिकित्सक-रोगी संबंध पर इसका प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है, जहाँ रोगी YouTube वीडियो के आधार पर विशेषज्ञ की सलाह को चुनौती देता है। कार्यस्थलों पर कार्य-संस्कृति, उत्पादकता, सहयोग और संगठनात्मक विश्वास, सभी इसकी पहुँच में हैं। शासन व्यवस्था के स्तर पर नागरिक और सरकार, पुलिस और नागरिक, न्यायपालिका और मीडिया, राजनीतिक नेतृत्व और जनता के बीच सार्वजनिक विश्वास, वैधता, जवाबदेही और संस्थागत विश्वसनीयता पर इसका प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है।

सामाजिक व्यवस्था का कोई संबंध ऐसा नहीं बचता जो इसके प्रभाव से पूर्णतः अछूता हो।

यह सुझाव दिया जाता है कि संबंधों की अखंडता (Relationship Integrity) का संरक्षण किसी भी गंभीर कंटेंट गवर्नेंस व्यवस्था का केंद्रीय उद्देश्य होना चाहिए। अंततः एक प्रत्यास्थ राष्ट्र उन्हीं संबंधों पर आधारित होता है जिनकी नींव विश्वास, उत्तरदायित्व, पारस्परिक सम्मान और विवेकपूर्ण निर्णय पर टिकी होती है। जब यही संबंध व्यक्तिगत स्तर से लेकर संस्थागत स्तर तक व्यवस्थित रूप से विकृत होने लगते हैं, तब केवल सामाजिक व्यवस्था कमजोर नहीं होती; उसका क्रमिक विखंडन प्रारंभ हो जाता है।

जब सामाजिक ताना-बाना बिखरने लगता है

डिजिटल कंटेंट का प्रत्येक अंश, चाहे वह सकारात्मक हो या नकारात्मक, सामाजिक एकजुटता, नागरिक उत्तरदायित्व, सार्वजनिक विश्वास और सामुदायिक प्रत्यास्थता को किसी न किसी रूप में प्रभावित करता है। परिवारों, समुदायों, विद्यालयों, धार्मिक संस्थाओं, नागरिक समाज संस्थाओं तथा लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं का कार्य-संचालन इससे प्रभावित होता है। यह सार्वजनिक धारणाओं, सामाजिक मानकों, सांस्कृतिक मूल्यों, सामूहिक पहचान और नागरिक सहभागिता के स्वरूप को निरंतर आकार देता रहता है।

2018 में भारत के कई राज्यों में WhatsApp पर प्रसारित भ्रामक संदेशों और वीडियो के कारण भीड़ द्वारा निर्दोष लोगों की हत्या की घटनाएँ हुईं। अफ़वाहों ने बच्चा-चोरी का भय फैलाया, और डिजिटल कंटेंट ने भीड़ को हिंसा के लिए संगठित किया। कोई सेना नहीं आई थी, कोई विदेशी आक्रमण नहीं हुआ था। एक मोबाइल स्क्रीन पर आया एक वीडियो, और पड़ोसी पड़ोसी के लिए खतरा बन गया।

जब कंटेंट भ्रामक, विभाजनकारी अथवा मनोवैज्ञानिक रूप से संचालित होता है, तब सामाजिक विखंडन गहराता है। पारस्परिक विश्वास कमजोर होता है। वैचारिक, धार्मिक और सामुदायिक विभाजन तीव्र होते हैं। नागरिक उत्तरदायित्व क्षीण होता है और सामाजिक संस्थाओं के प्रति विश्वास घटता है। इन संचयी प्रभावों का अंतिम परिणाम किसी राष्ट्र की सामाजिक पूंजी (Social Capital) की शक्ति को निर्धारित करता है; वह विश्वास, सहयोग, पारस्परिकता और सामूहिक क्षमता जिनके आधार पर कोई समाज सामान्य परिस्थितियों के साथ-साथ संकट के समय भी प्रभावी ढंग से कार्य कर पाता है।

आर्थिक दृष्टि से भी इसका प्रभाव उतना ही गंभीर है, यद्यपि इस पर अपेक्षाकृत कम ध्यान दिया गया है। आज डिजिटल कंटेंट केवल संचार का माध्यम नहीं रह गया है, बल्कि वह एक प्रभावशाली आर्थिक चर (Economic Variable) बन चुका है, जो श्रम दक्षता, मानव पूंजी, उपभोक्ता व्यवहार तथा समग्र आर्थिक प्रदर्शन को प्रभावित करने की क्षमता रखता है। ध्यान अर्थव्यवस्था (Attention Economy) के विस्तार ने मानव का ध्यान स्वयं एक व्यावसायिक वस्तु में परिवर्तित कर दिया है। डिजिटल विज्ञापन

आधारित मॉडल ऐसे व्यवहारिक तंत्र विकसित कर रहे हैं जिनका उद्देश्य उत्पादक गतिविधियों की अपेक्षा लोगों को अधिक समय तक स्क्रीन से जोड़े रखना है।

मनोवैज्ञानिक रूप से उद्दीपक अथवा भ्रामक कंटेंट के लंबे और अनियंत्रित संपर्क को तनाव, चिंता, अवसाद, अकेलेपन, भावनात्मक थकान, नींद संबंधी विकारों, व्यवहारिक निर्भरता, शारीरिक गतिविधियों में कमी तथा कार्य-थकावट (Burnout) जैसी समस्याओं से जोड़ा गया है। स्वास्थ्य संबंधी भ्रामक सूचनाओं और छद्मवैज्ञानिक (Pseudoscientific) कंटेंट का तीव्र प्रसार जनता की वैज्ञानिक समझ को विकृत करता है, विशेषज्ञों पर विश्वास को कमजोर करता है और सार्वजनिक स्वास्थ्य आपात स्थितियों के दौरान प्रभावी प्रतिक्रिया को जटिल बना देता है। COVID-19 महामारी के दौरान सोशल मीडिया पर फैली भ्रामक सूचनाओं ने टीकाकरण अभियान को किस सीमा तक प्रभावित किया, यह एक विश्वव्यापी अनुभव रहा है जिसका भारत भी अपवाद नहीं था।

जिस प्रकार मन इससे प्रभावित होता है, उसी प्रकार शरीर भी इसके प्रभाव से अछूता नहीं रहता।

आंतरिक अराजकता के उत्प्रेरक के रूप में डिजिटल कंटेंट

यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि डिजिटल कंटेंट का प्रभाव सूचना के क्षेत्र तक सीमित नहीं है, बल्कि यह आधुनिक राष्ट्रों की आंतरिक सुरक्षा संरचना का एक अत्यंत महत्वपूर्ण निर्धारक बनता जा रहा है। डिजिटल कंटेंट एक ऐसे संभावित उत्प्रेरक (Catalyst) के रूप में कार्य करता है, जो क्रमिक रूप से कथाओं (Narratives) को व्यवहारिक लामबंदी (Behavioural Mobilisation) में परिवर्तित कर सकता है और अनुकूल परिस्थितियों में व्यापक सुरक्षा चुनौतियों की श्रृंखला को जन्म दे सकता है।

यह प्रक्रिया प्रायः भावनात्मक रूप से उद्दीपक कथाओं के निर्माण और उनके तीव्र प्रसार से प्रारंभ होती है। ये कथाएँ लोगों की धारणाओं को प्रभावित करती हैं, उनकी पहचान की भावना को सुदृढ़ करती हैं और उन्हें डिजिटल माध्यमों से जुड़े समुदायों में संगठित करती हैं। जैसे-जैसे ये कथाएँ गति प्राप्त करती हैं, ऑनलाइन लामबंदी क्रमशः समन्वित सामूहिक गतिविधियों, सड़क-स्तरीय आंदोलनों, सार्वजनिक अव्यवस्था और दीर्घकालिक नागरिक अशांति में परिवर्तित हो सकती है। 2020 में दिल्ली में हुई साम्प्रदायिक हिंसा के दौरान सोशल मीडिया पर चलाए गए समन्वित अभियानों ने भीड़ को संगठित करने, भ्रामक सूचनाएँ फैलाने और ध्रुवीकरण को तीव्र करने में निर्णायक भूमिका निभाई। परिणामस्वरूप संस्थागत वैधता कमजोर पड़ी, जनता का विश्वास घटा, कानून प्रवर्तन एजेंसियों पर असाधारण दबाव बढ़ा और आंतरिक स्थिरता प्रभावित हुई।

डिजिटल कंटेंट आज उग्रवादी संगठनों की भर्ती, संगठित अपराध, साइबर-सक्षम वित्तीय धोखाधड़ी, ऑनलाइन ठगी, एन्क्रिप्टेड संचार, कट्टरपंथीकरण, दुष्प्रचार अभियानों, अंतरराष्ट्रीय आपराधिक समन्वय तथा गुप्त प्रभाव अभियानों के लिए एक प्रभावी माध्यम के रूप में भी उभर रहा है। इन गतिविधियों का संचालन प्रायः अनेक न्यायिक क्षेत्रों (Jurisdictions) में फैला होता है और वे परिवारों, समुदायों तथा पारंपरिक पुलिस व्यवस्था की प्रभावी पहुँच से बाहर संचालित होती हैं।

ये अलग-अलग घटनाएँ नहीं हैं। ये सुव्यवस्थित नेटवर्क हैं। ऐसे दुष्प्रभावी नेटवर्क, जिनका उद्देश्य समाज और राज्य की स्थिरता को कमजोर करना है, और जो अब परिवार की सीमाओं से आगे, समाज की पहुँच से परे तथा अनेक मामलों में स्वयं राज्य की पारंपरिक नियंत्रण क्षमता से भी आगे विकसित हो चुके हैं।

कंटेंट गवर्नेंस को आंतरिक सुरक्षा रणनीति का एक अभिन्न अंग माना जाना चाहिए। इसका उद्देश्य केवल अवैध कंटेंट की पहचान और उसे हटाना नहीं होना चाहिए। इसके दायरे का विस्तार करते हुए संज्ञानात्मक प्रत्यास्थता (Cognitive Resilience) को सुदृढ़ करना, सूचना की अखंडता (Information Integrity) की रक्षा करना, संस्थागत विश्वास को मजबूत करना, विभिन्न एजेंसियों के बीच समन्वय को बेहतर बनाना तथा कंटेंट-प्रेरित सुरक्षा जोखिमों की समय रहते पहचान कर उन्हें व्यापक सार्वजनिक व्यवस्था, शासन और राष्ट्रीय स्थिरता के लिए संकट बनने से पहले ही नियंत्रित करने की सक्रिय क्षमता विकसित करना आवश्यक है।

घेराबंदी में सार्वभौम चेतना

डिजिटल सूचना पारिस्थितिकी तंत्र के उदय ने सुरक्षा की पारंपरिक अवधारणा के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता उत्पन्न कर दी है। अब सुरक्षा की परिभाषा केवल भौतिक, साइबर अथवा सूचना सुरक्षा तक सीमित नहीं रह सकती। इसके दायरे में राष्ट्र की संज्ञानात्मक क्षमता (Cognitive Capacity) के संरक्षण को भी सम्मिलित करना होगा।

राष्ट्रीय संज्ञानात्मक सुरक्षा (National Cognitive Security) का उद्देश्य उन संज्ञानात्मक क्षमताओं का विकास और संरक्षण करना है, जिनके माध्यम से व्यक्ति स्वतंत्र रूप से सूचना का मूल्यांकन कर सके, तथ्य और दुष्प्रचार के बीच अंतर कर सके, विवेकपूर्ण निर्णय ले सके तथा सूचित विकल्प चुन सके। आज का सूचना परिवेश एल्गोरिद्मिक प्रवर्धन (Algorithmic Amplification), कृत्रिम रूप से निर्मित मीडिया (Synthetic Media), डीपफेक, समन्वित प्रभाव अभियानों तथा मनोवैज्ञानिक रूप से अभिकल्पित डिजिटल कंटेंट से परिपूर्ण है। 2024 के भारतीय आम चुनावों से पहले AI-जनित डीपफेक वीडियो का प्रसार, जिनमें राजनीतिक नेताओं को ऐसे वक्तव्य देते दिखाया गया जो उन्होंने कभी दिए ही नहीं, इस खतरे का ताज़ा और प्रत्यक्ष उदाहरण है। ऐसे वातावरण में यही संज्ञानात्मक क्षमताएँ मनोवैज्ञानिक हेरफेर, सामाजिक ध्रुवीकरण, कट्टरपंथीकरण और सामाजिक विखंडन के विरुद्ध पहली सुरक्षा पंक्ति का कार्य करती हैं।

डिजिटल प्रौद्योगिकियों की मानव व्यवहार को प्रभावित करने की बढ़ती क्षमता, राष्ट्रीय संप्रभुता की पारंपरिक अवधारणा पर भी पुनर्विचार की माँग करती है। यह सुझाव दिया जाता है कि डिजिटल युग में भू-भाग, जनसंख्या, शासन व्यवस्था, अर्थव्यवस्था और सैन्य शक्ति के साथ-साथ नागरिकों की व्यवहारिक स्वायत्तता भी संप्रभु राष्ट्र की एक महत्वपूर्ण सामरिक विशेषता बन चुकी है।

पारंपरिक खतरे किसी राष्ट्र की भूमि पर कब्ज़ा करने, उसकी अर्थव्यवस्था को बाधित करने या उसकी सैन्य क्षमता को कमजोर करने का प्रयास करते थे। इसके विपरीत, समकालीन प्रभाव अभियानों का लक्ष्य मानव की संज्ञानात्मक प्रक्रिया, भावनाएँ, प्राथमिकताएँ, निर्णय और सामूहिक व्यवहार बनते जा रहे हैं। यह सब निरंतर डिजिटल रूप से प्रसारित और प्रवर्धित कंटेंट के माध्यम से किया जाता है।

जब बाहरी शक्तियाँ अथवा गैर-राज्यीय तत्व इस स्थिति में पहुँच जाते हैं कि वे नागरिकों के सोचने के तरीके, सूचना ग्रहण करने की प्रवृत्ति, वस्तुओं की खरीद, निवेश संबंधी निर्णय, चुनावों में भागीदारी, विरोध-प्रदर्शनों में शामिल होने की प्रवृत्ति, संस्थाओं पर विश्वास, सामाजिक पहचान के निर्माण अथवा व्यक्तियों, समुदायों और स्वयं राज्य के प्रति शत्रुतापूर्ण भावनाओं को प्रभावित कर सकें, तब यह किसी राष्ट्र के लिए अत्यंत गंभीर सामरिक चुनौती बन जाती है।

इस प्रकार का व्यवहारिक प्रभाव बिना किसी प्रत्यक्ष सैन्य आक्रमण अथवा क्षेत्रीय अतिक्रमण के भी जनमत, उपभोक्ता व्यवहार, राजनीतिक सहभागिता, सामाजिक एकता, आर्थिक निर्णयों, संस्थागत वैधता तथा राष्ट्रीय सुरक्षा की दिशा को धीरे-धीरे परिवर्तित कर सकता है।

इसी आधार पर व्यवहारिक संप्रभुता (Behavioural Sovereignty) को किसी राष्ट्र की उस क्षमता के रूप में समझा जा सकता है, जिसके माध्यम से वह अपने नागरिकों के स्वतंत्र विवेक, निर्णय लेने की स्वायत्तता तथा व्यवहारिक प्रत्यास्थता को सुनियोजित मनोवैज्ञानिक हेरफेर, व्यवहारिक विघटन, दमनकारी प्रभावों तथा समन्वित सूचना अभियानों से सुरक्षित रख सके।

सेंसरशिप नहीं, बल्कि राष्ट्रीय प्रत्यास्थता की संस्थागत संरचना

डिजिटल कंटेंट का अत्यधिक उपभोग नशीले पदार्थों की तरह प्रभाव उत्पन्न करने लगा है। यह अतिशयोक्तिपूर्ण उपमा नहीं, संरचनात्मक वास्तविकता है। भावनात्मक रूप से उद्दीपक, भ्रामक अथवा मनोवैज्ञानिक रूप से अभिकल्पित कंटेंट के लगातार संपर्क में रहने से ध्यान, स्मृति, तर्कशक्ति, भावनात्मक संतुलन, आवेग नियंत्रण, सहानुभूति, विवेक, समालोचनात्मक चिंतन तथा वास्तविकता का परीक्षण करने की क्षमता क्षीण होने लगती है।

नीतिगत विमर्श को कंटेंट नियंत्रण अथवा सेंसरशिप की संकीर्ण अवधारणा से आगे बढ़ाकर प्रत्यास्थता-आधारित शासन व्यवस्था (Resilience-based Governance Architecture) की दिशा में ले जाना होगा। डिजिटल कंटेंट एक साथ मानव मनोविज्ञान, सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा, आर्थिक गतिविधियों, शासन, कानून प्रवर्तन, सामाजिक एकता और राष्ट्रीय सुरक्षा को प्रभावित करता है। इतने व्यापक और बहुआयामी प्रभाव वाले विषय का समाधान न तो कोई एक संस्था कर सकती है, न कोई एक कानून और न ही किसी एक डिजिटल मंच पर की गई नियामक कार्रवाई।

आवश्यकता एक ऐसे सम्पूर्ण-सरकार (Whole-of-Government) और सम्पूर्ण-समाज (Whole-of-Society) दृष्टिकोण की है, जिसमें उत्तरदायित्व अनेक परस्पर पूरक और एक-दूसरे को सुदृढ़ करने वाली संस्थागत परतों के बीच सुव्यवस्थित रूप से विभाजित हो। इस ढाँचे के चार स्तंभ प्रस्तावित हैं।

पहला, संवैधानिक और विधिक स्तंभ; जो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा करते हुए उत्तरदायित्व, जवाबदेही और विधिसम्मत प्रक्रिया की स्पष्ट रूपरेखा निर्धारित करे। इसमें शासन स्तर पर संस्थागत समन्वय, रणनीतिक पर्यवेक्षण तथा विभिन्न एजेंसियों के बीच प्रभावी सहयोग सम्मिलित होना चाहिए।

दूसरा, प्रौद्योगिकी और प्लेटफ़ॉर्म स्तंभ; जिसमें एल्गोरिद्मिक पारदर्शिता, उपयोगकर्ता सुरक्षा, जोखिम मूल्यांकन, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित पहचान प्रणालियाँ, डीपफेक का पता लगाना, स्वचालित बॉट की पहचान तथा प्रभावी शिकायत और रिपोर्टिंग तंत्र सम्मिलित हों।

तीसरा, सामाजिक प्रत्यास्थता स्तंभ; जिसमें परिवार की भूमिका उत्तरदायी डिजिटल अभिभावकत्व (Digital Parenting) में, शिक्षा व्यवस्था का दायित्व डिजिटल साक्षरता और समालोचनात्मक चिंतन के विकास में, स्वास्थ्य क्षेत्र की प्राथमिकता डिजिटल कल्याण (Digital Well-being) में, और समुदाय तथा नागरिक समाज की भूमिका सामाजिक एकता एवं सामुदायिक प्रत्यास्थता को सुदृढ़ करने में हो।

चौथा, सुरक्षा और अनुसंधान स्तंभ; जिसमें कानून प्रवर्तन एजेंसियों की साइबर-सक्षम अपराधों से निपटने की क्षमता, अनुसंधान समुदाय द्वारा डिजिटल कंटेंट के व्यवहारिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक और राष्ट्रीय सुरक्षा संबंधी प्रभावों का व्यवस्थित मापन और विश्लेषण, तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सीमा-पार खतरों और नियामकीय समन्वय के लिए प्रभावी सहयोग सम्मिलित हों।

सामूहिक रूप से ये चारों परस्पर संबद्ध स्तंभ कंटेंट गवर्नेंस को केवल ऑनलाइन मंचों के नियमन तक सीमित व्यवस्था नहीं रहने देते, बल्कि इसे राष्ट्रीय प्रत्यास्थता के एक व्यापक रणनीतिक पारिस्थितिकी तंत्र के रूप में स्थापित करते हैं।

लोकतांत्रिक मूल्यों की रक्षा, संवैधानिक स्वतंत्रताओं का संरक्षण तथा खुले और मुक्त सूचना परिवेश को बनाए रखना, कंटेंट की अखंडता, संबंधों की अखंडता, मनोवैज्ञानिक अखंडता, संज्ञानात्मक सुरक्षा, व्यवहारिक संप्रभुता, संस्थागत विश्वास और सामाजिक प्रत्यास्थता को सुदृढ़ करने के साथ पूर्णतः संगत है।

वास्तविक खतरा केवल स्क्रीन नहीं है। वास्तविक खतरा उस डिजिटल कंटेंट में है जो स्क्रीन के माध्यम से हमारे सामने पहुँचता है; उस मनोवैज्ञानिक प्रभाव में है जो वह मानव मस्तिष्क, सोच और व्यवहार पर छोड़ता है; उन परिवर्तनों में है जो वह परिवार, समाज और मानवीय संबंधों की संरचना में उत्पन्न करता है; और उस धीमे लेकिन निरंतर क्षरण में है जिसके माध्यम से वह किसी राष्ट्र की स्वतंत्र रूप से सोचने, निर्णय लेने तथा अपने भविष्य का निर्धारण करने की संप्रभु क्षमता को कमजोर करता है।

यही वास्तविक संघर्ष है। और यह संघर्ष पहले ही आरम्भ हो चुका है।

(आलेख में व्यक्त विचार लेखक के हैं। उनसे संपादक व प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में हमारा न्याय क्षेत्र दिल्ली होगा।)